21420 - क्या किसी एक मत का पालन करना अनिवार्य है

प्रश्न

क्या चारों मतों (मालिकी या हनफी या हंबली या शाफेई) में से किसी एक मत का पालन करना हर मुसलमान पर अनिवार्य है ? यदि इसका जवाब हाँ में है, तो सबसे बेहतर मत कौन सा है ? क्या यह सच है कि मुसलमानों के बीच सबसे अधिक प्रचलित मत इमाम अबू हनीफा का मत है ?

विस्तृत उत्तर

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणगान केवल अल्लाह तआला के लिए योग्य है।.

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणगान केवल अल्लाह के लिए योग्य है।

चारों मतों में से किसी एक विशिष्ट मत का पालन करना मुसलमान पर अनिवार्य नहीं है। ज्ञान, बोद्ध, समझ-बूझ और अहकाम को उनकी दलीलों (क़ुरआन और हदीस के मूल शब्द) से निकालने (प्राप्त करने) की क्षमता में लोग विभिन्न और अलग-अलग स्तर के हैं। चुनाँचे उनमें से कुछ लोगों के लिए तक़्लीद (अनुकरण) करना जायज़ है, बल्कि कभी-कभार उस पर तक़्लीद करना अनिवार्य होता है। जबकि कुछ लोगों के लिए केवल दलील व सुबूत का पालन करना होता है। स्थायी समिती के फतावा में इस मुद्दा का विस्तृत और संतोषजनक वर्णन हुआ है, जिसे यहाँ यथातथ्य उद्धृत करना बेहतर है :

प्रश्न :

हर समय और सभी परिस्थितियों में चारों मतों की पाबंदी करने और उनके कथनों का पालन करने का क्या हुक्म है ?

समिती ने जवाब दिया :

हर प्रकार की प्रशंसा केवल अल्लाह के लिए योग्य है, तथा दरूद व सलाम अवतरित हो उसके रसूल, उनकी संतान और उनके साथियों पर।

सर्व प्रथमः

चारों मत, चार इमामों : इमाम अबू हनीफा, इमाम मालिक, इमाम शाफेई और इमाम अहमद की तरफ मंसूब है। चुनाँचे हनफिया का मत इमाम अबू हनीफा की तरफ मंसूब है, और इसी प्रकार बाक़ी मत भी हैं।

दूसरा:

इन इमामों ने फिक़्ह (धर्म शास्त्र) को क़ुरआन और सुन्नत से लिया है, और वे सब इसमें मुज्तहिद (इज्तिहाद करनेवाले) थे। और मुज्तहिद या तो सत्य को पा लेता है तो ऐसी स्थिति में उसके लिए दोहरा अज्र व सवाब है, एक उसके इज्तिहाद (किसी मसअले का शरई हुक्म निकालने के लिए भरपूर कोशिश करने) का अज्र और एक सही हुक्म तक पहुँचने का अज्र, और या तो मुज्तहिद ग़लती कर जाता है तो उस के इज्तिहाद पर उसे अज्र दिया जाता है और उसकी ग़लती माफ (क्षमा) कर दी जाती है।

तीसरा:

क़ुरआन व सुन्नत से हुक्म निकालने में सक्षम व्यक्ति क़ुरआन व सुन्नत से हुक्म लेगा, जैसा कि उससे पहले के लोगों ने ऐसा ही किया है। जिस चीज़ के बारे में उसका मानना यह है कि सत्य (सही हुक्म) उसके विपरीत है तो उसमें उसके लिए तक़्लीद करना जायज़ नही है, बल्कि जिसे वह सत्य समझता है उसी का पालन करेगा। और जिस विषय में वह असमर्थ है और उसे उसकी ज़रूरत है तो उसमें उसके लिए तक़्लीद करना जायज़ है।

चौथा:

जो व्यक्ति क़ुरआन व सुन्नत से हुक्म निकालने में सक्षम न हो उसके लिए किसी ऐसे व्यक्ति की तक़्लीद करना जायज़ है जिसकी तक़्लीद करने के लिए उसका दिल संतुष्ट हो। यदि उसका दिल असंतुष्ट हो तो वह सवाल करे यहाँ तक कि उसे संतुष्टि प्राप्त हो जाए।

पाँचवां :

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट हो जाता है कि मुसलमान हर स्थिति और हर समय में इमामों के कथनों का अनुकरण नहीं करेगा, क्योंकि वे ग़लती भी करते हैं। बल्कि उनके कथनों में से उस कथन का अनुकरण किया जाएगा जो दलील से साबित हो चुका हो।)

"फतावा स्थायी समिति" (5/28)

तथा समिति के फत्वा संख्या (3323) में आया है :

(जो कोई क़ुरआन और सुन्नत से अहकाम निकालने का योग्य हो और इसकी क्षमता रखता हो भले ही पूर्व मुस्लिम विद्वानों से विरासत में मिली फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) की संपत्ति की मदद से हो, तो वह ऐसा कर सकता है ; ताकि वह खुद उस पर अमल करे, और उससे विवादों में फैसला करे, और जो कोई उससे फत्वा पूछे उसे फत्वा दे। और जो व्यक्ति इसका योग्य नहीं है उसे चाहिए कि अपने समय के विश्वसनीय विद्वानों से प्रश्न करे या विश्वसनीय भरोसेमंद विद्वानों की किताबों को पढ़े ताकि उनकी किताबों से हुक्म को जान सके और उसपर अमल करे, लेकिन चारों मतों के विद्वानों में से किसी एक विद्वान के साथ अपने सवाल या अध्ययन को सीमित न करे। और लोगों ने चारों इमामों की तरफ, उनकी प्रसिद्धि, उनकी किताबों के समायोजित होने, उनके फैलाव और उनके आसानी से उपलब्ध होने के कारण, रूजू किया है।

और जिसने शिक्षार्थियों पर सामान्य रूप से तक़्लीद के अनिवार्य होने की बात कही है, तो वह ग़लत एवं कठोर है और सामान्य रूप से शिक्षार्थियों के बारे में बुरा गुमान रखने वाला है, और उस ने एक विस्तृत मामले को संकीर्ण कर दिया है।

तथा जो तक़्लीद को चारों प्रसिद्ध मतों में सीमित करने की बात कहता है वह भी ग़लती पर है, उस ने बिना सुबूत के एक विस्तृत मामले को तंग कर दिया है। और अशिक्षित आदमी के लिए चारों इमामों में से किसी एक की, और उनके अलावा अन्य विद्वानों जैसे लैस बिन सअद तथा अवज़ाई आदि की तक़्लीद करने के संबंध में कोई अंतर नही है।)

"फतावा स्थायी समिति" (5/41)

तथा फत्वा संख्या (1591) में आया है :

(इमामों में से किसी ने भी अपने मत की तरफ नहीं बुलाया है, और न ही इसके लिए पक्षपात का तरीक़ा अपनाया है, और न ही किसी दूसरे को अपने मत या किसी विशिष्ट मत पर अमल करने के लिए बाध्य क्या है। वे लोग तो मात्र क़ुरआन व सुन्नत के अनुसार अमल की तरफ बुलाते थे, धर्म के नुसूस (क़ुरआन व हदीस के मूल शब्दों) की व्याख्या करते, उसके नियमों को स्पष्ट करते और उन्हीं के आधार पर दूसरे अहकाम निकालते और जिसके बारे में उनसे पूछा जाता फत्वा देते थे, परंतु अपने शिष्यों या उनके अलावा अन्य लोगों में से किसी को भी अपने विचारों का पाबंद नहीं करते थे, बल्कि ऐसा करने वाले की आलोचना करते थे, तथा वे आदेश देते थे कि अगर उनका विचार सहीह हदीस के खिलाफ़ हो तो उसे दीवार पर मार दिया जाए। उन में से किसी ने कहा है : "यदि सहीह हदीस आ जाए तो वही मेरा मत है।" अल्लाह उन सब पर दया करे।

किसी भी व्यक्ति पर इन मतों में से किसी विशिष्ट मत का अनुकरण करना अनिवार्य नहीं है। बल्कि उसे चाहिए कि वह

सत्य जानने के लिए भरपूर प्रयास करे यदि उसके लिए ऐसा संभव है, या वह इस संबंध में अल्लाह से मदद मांगे और फिर उस विद्या संपत्ति की सहायता ले जिसे पूर्वज मुस्लिम विद्वानों ने अपने बाद वालों के लिए छोड़ा है, और उसकी वजह से उनके लिए नुसूस (शरीयत के मूल शब्दों) को समझने और उनको लागू करने का तरीक़ा आसान कर दिया है। और जो किसी बाधा के कारण नुसूस वग़ैरा से अहकाम निकालने की क्षमता न रखे तो शरीअत के जिन अहकाम की उसे ज़रूरत है उनके बारे में भरोसेमंद विद्वानों से पूछेगा। जैसा कि अल्लाह का फरमान है :

فَاسْأَلُوا أَهْلَ الذِّكْرِ إِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ

"अगर तुम्हें ज्ञान न हो तो अह्ले ज़िक्र (ज्ञान वालों) से पूछ लो।"

और उसे चाहिए कि अपना सवाल ज्ञान, प्रतिष्ठा, आत्मनिग्रह और सदाचार में प्रसिद्ध भरोसेमंद धर्म ज्ञानी से करे।)

"फतावा स्थायी समिति" (5/56)

इमाम अबू हनीफा रहिमहुल्लाह का मत हो सकता है मुसलमानों के बीच सबसे अधिक प्रचलित हो, और शायद इसके कारणों में से एक कारण उस्मानी (तुर्क) खलीफाओं का इस मत को अपनाना है, और उन्हों ने छह सदियों से अधिक समय तक मुस्लिम देशों पर शासन किया है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि अबू हनीफा रहिमहुल्लाह का मत सब से सही मते है, या इस मत के अंदर सभी इज्तिहादात सही हैं, बल्कि यह मत भी अन्य मतों की तरह है, जिसमें सही और ग़लत दोनों हैं। और एक मुसलमान पर अनिवार्य यह है कि वह कहने वाले की परवाह किए बिना हक़ और सही बात का पालन करे।

और अल्लाह तआला ही सर्वश्रेष्ठ ज्ञान रखता है।